शब्द–ब्रह्म
E - ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2016
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

हिंदी उपन्यास साहित्य में ग्रामीण जीवन

अलका शर्मा (शोधार्थी)
तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अध्ययन शाला
देवी अहिल्या विश्वविद्यालय
इंदौर, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

उपन्यास साहित्य को अन्य साहित्यिक विधाओं से अधिक लोकप्रिय और सशक्त विधा माना जाता है, क्योंकि इसमें मनोरंजन का तत्व तो होता है, उसके साथ ही उपन्यास विधा में अन्य साहित्यिक विधा की अपेक्षा जीवन को उसकी बहुमुखी छवि के साथ व्यक्त करने की शक्ति होती है। उपन्यास को पूँजीवादी सभ्यता की देन कहा जाता है। अर्थात् यह माना जाता है कि पूँजीवादी सभ्यता के विविध जीवन सत्यों को कथा के माध्यम से व्यक्त करने के लिए ही उपन्यास की उत्पत्ति हुई है। उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद ने अपने साहित्य से हिंदी की उपन्यास और कहानी विधा को न सिर्फ समृद्ध किया बल्कि दोनों विधाओं के उच्च मापदंड स्थापित किये । प्रस्तुत शोध पत्र में हिंदी उपन्यास साहित्य में ग्रामीण जीवन की पड़ताल की गयी है

भूमिका

रामदरश मिश्र ने उपन्यास के सम्बन्ध में लिखा है, "यह मात्र कहानी नहीं हैं। कहानी यानि कथा तो इसका माध्यम मात्र है , मूल वस्तु है व वर्तमान जीवन का जटिल यथार्थवाद। जीवन-मूल्यों का संक्रमण , समाज के नये संबंधों की निर्मिति, उसके बीच उठते हुए प्रश्नों को भौतिक या वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझने की आकुलता नवीन भौतिक सत्यों के बीच बनती हुई मानव-चरित्र की नई दिशाएँ , ये सारी बातें मानों उपन्यास नामक वि धा के माध्यम से फूट पड़ने के लिए आकुल थी।"

'उपन्यास' विधा को आधुनिक युग का महाकाव्य कह सकते हैं क्योंकि जिस प्रकार महाकाव्य में जीवन-जगत की संपूर्णता जैसे गहरे भाव-बोध , मानव-मूल्य विशिष्ट दर्शन आदि जीवन की विविधता के दर्शन होते हैं, उसी प्रकार उपन्यास विधा में भी ये सारे तत्व अपनी संपूर्णता के साथ विद्यमान होते हैं।

हिन्दी उपन्यास साहित्य में प्रेमचंद के आगमन से एक नये युग का प्रारंभ हुआ। प्रेमचंद में यथार्थ की पकड़ थी। प्रेमचंद अपने युग की सामाजिक चेतना एवं राष्ट्रीय जागरण से पूर्णतः प्रभावित थे। प्रेमचंद के पूर्व के उपन्यासोंकार यथार्थ को गहराई से नहीं पकड़ सके और न ही उन्होंने शिल्प को संवारा।

प्रेमचंद 'प्रेमाश्रम' उपन्यास में तत्कालीन समाज के एक सत्य को लेकर चले और वह सत्य है - किसानों का जीवन। प्रेमचंद ने इस उपन्यास में आर्थिक विषमता के ऊपर आरोपित न्याय , अधिकार और वर्ग के चोंगे को उतार फेंका और सच्ची वस्तु का विश्लेषण करते हुए मानवीय न्याय और अधिकार की बात उठाई। 'प्रेमाश्रम' का पुरूष पात्र प्रेमशंकर आधुनिक चेतना सम्पन्न (साम्यवादी चेतना परक) युवक है। जो किसानों

के लिए अपने अधिकारों को छोड़कर ग्राम सेवा में जीवन व्यतीत करने का फैसला कर लेता है। वैसे यह पात्र अस्वाभाविक-सा जान पड़ता है परन्तु यदि उस काल की राष्ट्रीय चेतना और उभरते हुए समाजवादी विचारों के आलोक में देखें तो पायेंगे कि सामान्य रूप से प्रेमशंकर भले न दिखाई पड़ता हो किन्तु वह निश्चित रूप से एक प्रकार की चेतना के रूप में विद्यमान था, अर्थात् प्रेमशंकर के माध्यम से तत्कालीन सत्य का एक और आयाम उद्घाटित होता है , जो भविष्य की संभावना मालूम पड़ता है।

'प्रेमाश्रम' में उन्होंने राष्ट्रीय समस्याओं जैसे- किसानों की गरीबी एवं असहाय दशा , जमींदारों तथा उनके कारिंदों द्वारा किसानों का शोषण , हिन्दू-मुस्लिम एकता, वर्तमान शिक्षा-प्रणाली की एकांगिकता आदि प्रश्नों को प्रधानता दी है। एम.एल. डार्लिंग के कथन अनुसार , "भारत में सबसे अधिक विस्मयकारी तत्व यह है कि उसकी जमीन अमीर है, लेकिन उसकी जनता गरीब है।" इसी विस्मयकारी उलझन को सुलझाने का प्रयास प्रेमचंद ने 'प्रेमाश्रम' उपन्यास में किया है। जिसमें मनोहर बलराज , कादिर, दुखरन भगत आदि अनपढ़ किसानों की कथा विस्तार से कही गई है। आलोच्य युग में जब किसानों की दुर्दशा देखने वाला कोई नहीं था। उनके हितों और अधिकारों की रक्षा के लिए आवाज उठाने वाला कोई नहीं था। ऐसे कठिन समय में तिरस्कृत शोषित किसानों के उद्धार का बीड़ा प्रेमचंद ने उठाया था। वे मानते थे कि , "जो दलित है , पीड़ित है, वंचित है - चाहे वह व्यक्ति हो या समूह, उसकी हिमायत और वकालत करना साहित्यकार का फर्ज है।"

'गोदान' (1935) प्रेमचंद का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है, जिसमें उनकी सम्पूर्ण साहित्यिक और वैयक्तिक उपलब्धियाँ अपने पूरे विश्वास और अविश्वास के साथ प्रयुक्त हुई है। परन्तु संचयन, शील-निरूपण और वर्णित-विषयों के विस्तार को लेकर इसे हिन्दी उपन्यास-साहित्य के क्षेत्र में विशेष उपलब्धि मान सकते हैं। 'गोदान' प्रेमचंद का ही नहीं हिन्दी उपन्यास साहित्य का श्रेष्ठ यथार्थवादी उपन्यास है।

'गोदान' की कथा का केन्द्र होरी नामक किसान है जो अपने समस्त गुण-दोषों के अभाव और शक्ति के साथ भारत के सच्चे किसानों का प्रतिनिधि है। उसकी एक छोटी-सी आकांक्षा है कि उसके घर एक गाय आये और यह छोटी-सी आकांक्षा उसे कितनी विडम्बनाओं और परेशानियों के भंवरजाल में फंसाती चली जाती है। वह गाय के लिए जी-तोड़ मेहनत करता है, उसे एक अधेड़ के साथ अपनी बेटी बेचनी पड़ती है , खेत बेचने पड़ते हैं और अंत में इसी इच्छा को लिए अर्थाभाव में मर जाता है। 'गोदान' में प्रेमचंद ने भारतीय किसान को बहुत विश्वस्त रूप से उभारा है।

"वैसे प्रेमचंद ने मान्य रूप से अपने प्रायः सभी उपन्यासों में और विशेष रूप से 'रंगभूमि' और 'कर्मभूमि' में ग्रामीणों की स्थिति का चित्रण किया है और 'गोदान' को तो ग्रामीण जीवन और कृषि-संस्कृति का महाकाव्य ही कहा जा सकता है। ग्रामीण-जीवन का इतना सच्चा, व्यापक और प्रभावशाली चित्रण हिन्दी के किसी अन्य उपन्यास में नहीं हुआ है। संभवतः वह संसार के साहित्य में बेजोड़ है।"

महाजन वर्ग, पुरोहित वर्ग और व्यापारी वर्ग इन सभी वर्गों का चित्रण सेवासदन , कर्मभूमि, गोदान, तितली, महाकाल आदि उपन्यासों में किया गया है। 'गोदान' में महाजनवर्ग का चित्रण विशेष बल देकर किया गया है। महाजनवर्ग के

शब्द–ब्रह्म
E - ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2016
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

शिकार 'होरी' के बारे में रामविलास शर्मा लिखते हैं, "वह उन तमाम गरीब किसानों की विशेषताएँ लिए हुए है , जो जमींदारों और महाजनों की धीमें-धीमें लेकिन बिना रूके चलने वाली चक्की में पिसा करते हैं।"

पुरोहित वर्ग का चित्रण भी गोदान में हुआ है। उसमें पुरोहित दाताहीन 'होरी' के हरेक काम में आगे है। यहाँ तक कि मरते समय भी हो री की पत्नी धनिया से कहता है 'गोदान' करा दो और धनिया से उसकी बची हुई सुतली के बीस आने पैसे लेने से भी नहीं हिचकता है - "महाराज! घर में न गाय है , न बछिया, न पैसा, यही पैसा है यही उनका गोदान है और पछाड़ खाकर गिर पड़ी।" प्रेमचंद ने अपने उपन्यास 'वरदान' में भी नगर के मध्यम वर्ग की अपेक्षा ग्राम्य-जीवन और ग्रामीण समाज का जीवन्त वर्णन किया है। उनका 'प्रेमाश्रम' युगों से उत्पीड़ित , पदमर्दित, ग्रामीण चेतना का अग्रदूत बनकर आया। 'रंगभूमि' में भी ग्रामीण-जीवन की धड़कन सुनाई पड़ती है, किन्तु उसकी चरम परिणति 'गोदान' में हुई है।

ग्राम-समाज और कृषक-जीवन की समस्याओं का यथार्थवादी चित्रण करने वाले कथाकारों में प्रेमचंद के बाद नागार्जुन का अन्यतम स्थान है। यह ठीक ही कहा गया है कि प्रेमचंद की संवेदना नागार्जुन की रचनाओं में समाजवादी चेतना में परिणत हो जाती है। 'रतिनाथ की चाची ' में नागार्जुन परम्परागत समाज के मूल्यों के विरूद्ध विद्रोह का शंख फूंकते हुए कहते हैं - "बिहार प्रान्त के 1937-38 ई. के सशक्त किसान आन्दोलन का चित्रण करते हुए नागार्जुन ने लिखा है कि 'सभा जुलूस, दफ़ा एक सौ चवालीस, गिरफ्तारी, सज़ा, जेल, भूख-हड़ताल, रिहाई यह सिलसिला किसानों को ठंडा नहीं कर सका। 'बलचनामा' में नागार्जुन ने जमींदार वर्ग के अमानुषिक अत्याचारों का चित्रण करके प्रेमचंद के द्वारा प्रस्तावित जमींदारी उन्मूलन के आन्दोलन को महती शक्ति प्रदान की है। इस उपन्यास में भारतीय किसान का दुख-दर्द और उसका समस्त जीवनव्यापी संघर्ष चित्रित हुआ है। 'बलचनामा' का पूरा चरित्र अपने जीवन की विषम परिस्थितियों से अनुभव ग्रहण कर धीरे-धीरे अधिकार चेतना सम्पन्न होने वाले किसान का चरित्र है। 'गोदान' में प्रेमचंद किसानों की जिस प्रसुप्त अधिकार चेतना को जगाने के लिए प्रयत्नशील है। 'बलचनामा' में आकर वह पूर्णतया जाग उठी है। बलचनामा के रूप में होरी की तरह जीवन भर अनवरत संघर्ष करते, घुटते, छटपटाते और टूट जाने वाले किसान का नहीं , अपितु एक नये जुझारू और संघर्षशील किसान का अवतरण होता है जो अपने जीवन को सुखी बनाने के लिए जी तोड़ मेहनत करता है, तो अपने अधिकारों की रक्षा के लिए जान की बाजी भी लगा देता है। नागार्जुन नई पीढ़ी के पथ-प्रदर्शक भी हैं जिनसे प्रेरित होकर अनेक सामयिक उपन्यासकारों ने अपने कथा लेखन में किसान मजदूर संघर्ष की अभिव्यक्ति प्रदान की है। नागार्जुन ने प्रेमचंद के मोह भंग को नया जीवन भी दिया है , क्योंकि प्रेमचंद युगीन ग्रामीण जीवन में एक सामाजिक-राजनीतिक हलचल थी, एक बहाव था जो अपना मार्ग और गन्तव्य निर्धारित न कर सका था , लेकिन प्रेमचं दोत्तर काल में स्थिति बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है। आजादी के बाद वर्गीय चेतना के आलोक में परिवर्तित परिस्थितियों को देखकर किसान और खेतिहर मज़दूर अपने मार्ग में भटकाव उत्पन्न करने वाले मतवादों में अंधेरे के आर-पार अपने गन्तव्य को स्पष्ट देखता है।

शब्द–ब्रह्म
E - ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2016
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

नागार्जुन का 'बलचनामा' चेतना सम्पन्न होने के कारण होरी की भांति निराश होकर अंतिम समय तक निरन्तर संघर्ष कर विजय पथ पर अग्रसर होता है।

प्रेमचंद के समान नागार्जुन का भी किसान-जीवन की समस्याओं से गहरा तादात्म्य है और शायद यही कारण है कि उनके उपन्यासों में ग्रामीण जन-जीवन की वास्तविक यथार्थनुभूति होती है। उनके उपन्यास न केवल राष्ट्रीय स्तर पर ही चर्चित हुए है अपितु अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी ख्याति अर्जित कर चुके हैं।

'रतिनाथ की चाची ', 'बलचनामा', बाबा बटेसर नाथ', 'नई पौध ', 'वरूण के बेटे ', 'कुम्भीपाक', 'उग्रतारा', आदि नागार्जुन के प्रसिद्ध उपन्यास हैं जो स्वातंत्रयोत्तार भारतीय ग्रामीण जीवन में होने वाले परिवर्तनों का साक्षात्कार कराते है।

ग्रामीण जीवन की एक झलक निराला के उपन्यासों में भी दृष्टव्य है। निराला पहली बरसात में फसलों के लिए खेत तैयार करते किसानों का वर्णन करते हैं, "दुपहर हो रही थी। गहरा ढांगरा गिर चुका था। जमीन गीली हो गई थी। ताल-तलैया, गड़ ही-गढ़े कुछ भर चुके थे। कपास, धान, अगमन, ज्वार-बाजरे, अरहर, सनई, सन, लोबिया, खीरे, मक्की, उर्द आदि बोने के लोभी किसान तेजी से हल चला रहे थे। किसानी के जानकार बिल्लेसुर पहली वर्षा की मटैली सुगंध से मस्त होते हुए मौलिक बात करने की सोचते अपनी इसी धुन में बकरियों को लिए जा रहे थे।"

बिल्लेसुर ने बंटाई आधार पर एक खेत कारतकारी के लिए ले लिया था। उनके बैल नहीं होने से उन्होंने सोचा कि कोई देगा भी नहीं , इसलिए उन्होंने निश्चय किया कि छः-सात दिन में अपने काम भर की जमीन वे फावड़े से गोड़ डालेंगे, गाँव के लोग सब शकरकंद नहीं लगाते। वे शकरकंद लगाएंगे तो अच्छी रकम हाथ लग जाएगी।

इस तरह गाँव के जीवन में एक बात निराला ने बिल्लेसुर के माध्यम से बहुत अच्छी तरह रेखांकित किया है। गाँव की प्रतिक्रिया से प्रभावित हुए बिना अपने काम में लगा रहना ही ग्रामीण जीवन में सफलता की गारंटी है।

ग्रामीण जीवन में नामकरण करने के पीछे भी वहाँ का जीवन ही नहीं, सोच विचार और परिवेश भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे हैं। यही नहीं जब बिल्लेसुर को गाँव के लोग परेशान करते हैं तो वे अपने बकरे-बकरियों का नामकरण गाँव के लोगों के नाम पर करते है।

ग्रामीण जीवन के अनुभवी होने के कारण बिल्लेसुर जब स त्तीदीन के यहाँ बर्दवान बन जाते हैं तो उन्हें वहाँ सत्तीदीन की गायों की रखवाली करने में कोई परेशानी नहीं होती। इससे पता चलता है कि ग्रामीण-जीवन का अनुभव ही बिल्लेसुर को आजीविका के लिए सहायक बनता है, क्योंकि ग्रामीण जीवन की चुनौतियों से परिचित हो चुके बिल्लेसुर को गायों के काम को करने में परेशानी नहीं होती है।

कुछ समय तक बर्दवान में थोड़ा पैसा जमा कर लेने के बाद बिल्लेसुर जब गाँव आते है तो उनके प्रति लोगों में वैसी ही उत्सुकता होती है , जैसी कि शहर से गाँव लौटने वाले को लेकर गाँव भर में रहती है। यही ग्रामीण स्वभाव बिल्लेसुर को लेकर भी प्रकट होता है। आगे उपन्यास में भी जो वर्णन आते है वे ग्रामीण-जीवन की झाँकी बहुत कुशलता से प्रस्तुत करते हैं।

प्रसाद के उपन्यासों में केवल 'तितली' ही ग्रामीण जीवन को महत्व देता है, परन्तु प्रसाद ने ग्राम्य-

जीवन की दरिद्रता और अर्थ वैष म्य के उचरते हुए संकेत मात्र दिये हैं - अर्थ प्रधान व्यवस्था के शिकंजे में जकड़ी हुई निरीह जनता के भाव जगत का उद्घाटन नहीं किया है। "यद्यपि उन्होंने गाँव के दरिद्र किसान के प्रति सहानुभूति भी दिखाई परन्तु उसमें प्रेमचंद की -सी गहराई एवं व्यापकता नहीं है।

निष्कर्ष

प्रेमचंद युगीन उपन्यासों की एक धारा स्पष्टतः समसामयिक सन्दर्भों से जुड़ी है तो दूसरी ओर मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की धारा व्यक्ति के इर्द-गिर्द घूमती दिखाई दी है। अतः निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि प्रेमचंद युग में भली-भांति यह जान लिया गया था कि भारत की मूल आत्मा गाँवों में बसती है। ग्रामीण परिवेश में ही मानवता की गहरी झलक मिलती है।

संदर्भ ग्रंथ

1 हिन्दी उपन्यास: एक अन्तर्यात्रा , रामदरश मिश्र , पृष्ठ 16-17

2 इंडिया टुडे, एम.ए. डार्लिंग, पृष्ठ 21

3 हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ. नगेन्द्र, पृष्ठ 575

4 नागार्जुन के उपन्यासों की भावभूमि , रतिनाथ की चाची, श्रीमती कमलेश त्यागी , एम.फिल (हिन्दी) , अप्रकाशित, पृष्ठ 58

5 नागार्जुन के उपन्यासों की भावभूमि , रतिनाथ की चाची, श्रीमती कमलेश त्यागी, पृष्ठ 100,

6 आधुनिक हिन्दी साहित्य - डॉ.. रामगोपाल चौहान, पृष्ठ 220

7 गोदान - प्रेमचंद, पं.अमृतलाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना , एक अनुशीलन (प्रदीप कटारा) , पृष्ठ 300

8 हिन्दी उपन्यास, श्री शिवनारायण श्रीवास्तव , पृष्ठ 84

9 हिन्दी उपन्यास एक सर्वेक्षण, महेन्द्र चतुर्वेदी, पृष्ठ 87

10 आंचलिक उपन्यासों के परि प्रेक्ष्य में रेणु: एक अनुशीलन, रंजना भागड़ीकर लघु शोध प्रबन्ध दे.अ.वि.वि. 1979